

साक्षात्कार

‘कलाएँ’ मानवीय संवेदनाओं को पैदा करने का साधन है, धनोपार्जन का नहीं- प्रो. अनिल बिहारी ब्योहार

- शाम्भवी शुक्ला

प्रो. अनिल बिहारी ब्योहार संगीत शास्त्र के क्षेत्र में एक बहुचर्चित नाम है, जिसे किसी खास परिचय की आवश्यकता नहीं है। इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़, छत्तीसगढ़ में 33 वर्षों तक अध्यापन कार्य कर चुके प्रो. ब्योहार दिसंबर 2018 में सेवानिवृत्त हुए हैं। आपके द्वारा लिखी दो पुस्तकें और 30 से अधिक शोधपत्र संगीत के ज्ञान भण्डार की अमूल्य निधि हैं। 15 से अधिक शोधार्थियों का शोध निर्देशन कर चुके प्रो. ब्योहार विभिन्न विश्वविद्यालयों की अकादमिक समितियों के सदस्य रह चुके हैं।



वर्तमान में आप ब्रेल काउन्सिल ऑफ़ इंडिया के सक्रिय सदस्य हैं। NIVH, देहरादून द्वारा प्रायोजित प्रोजेक्ट “Development of Braille Notation in Music” पर भी काम कर चुके हैं। कंप्यूटर तकनीकी के माध्यम से नेत्र दिव्यांग बच्चों को संगीत शिक्षा और शोध में अधिक सक्षम बनाने की दिशा में प्रयासरत प्रो. अनिल बिहारी ब्योहार से शाम्भवी शुक्ला की एक खास बातचीत के कुछ अंश प्रस्तुत हैं।

- नमस्कार सर, आप अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे बताएं ?

मेरा जन्म निम्न मध्य वर्गीय परिवार में हुआ और मेरे पिता मुख्य रूप से किसान थे। चार भाई और दो बहनों में मैं सबसे छोटा था। उस समय पाठशाला में प्रवेश की न्यूनतम आयु 6 वर्ष थी, तो अनौपचारिक रूप से मैंने अपने भाइयों के साथ पाठशाला जाना शुरू किया। उसी बीच दिसंबर 1958 में मुझे स्मॉल पॉक्स हुआ और इस बिमारी के दौरान मेरी आँखों की रोशनी चली गई। मेरे बड़े भाई ने 1962 में जबलपुर के एक सरकारी ब्लाइंड स्कूल मेरा दाखिला कराया और इसके बाद मैंने देहरादून के केन्द्रीय सरकारी विद्यालय से शिक्षा प्राप्त की। वहाँ सामान्य शिक्षा के साथ-साथ म्यूज़िक, कुकिंग, गार्डनिंग और छोटे-मोटे काम भी सिखाए जाते थे। संगीत के क्षेत्र में मेरा कभी आगे बढ़ने का उद्देश्य नहीं था। मैं सिर्फ शौकिया रूप से संगीत सीख रहा था और वह भी कभी एक जगह टिक के नहीं,



2 जुलाई 1977, राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली, कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती से पुरस्कार प्राप्त करते हुए।

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

शुरुआत वोक्ल म्यूजिक से की, फिर बांसुरी, तबला, सितार भी सीखा, उसके बाद केवल हारमोनियम ले लिया, तो इसी प्रकार संगीत से जुड़े विषयों का आनंद लिया.

मैंने सागर विश्वविद्यालय से ग्रेजुएशन किया, उसके बाद पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन से पी.जी. करने का प्लान था, लेकिन किन्हीं कारणों से उसमें कुछ देर लग रही थी. मैंने समय का सदुपयोग करने के लिए इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ से वायलिन विषय लेकर परास्नातक में प्रवेश ले लिया. अधिक रुझान ना होने के कारण प्रथम वर्ष में मात्र 54 प्रतिशत अंक प्राप्त हुए, तो मेरे भाई मुझसे बहुत नाराज होकर बोले “यह कोई तरीका नहीं है पढ़ाई करने का, तुम्हारा पहले का इतना बढ़िया करियर रहा है, तुम उसे छोड़ कर वापस आ जाओ”. खैर उसके पीछे का कारण मैंने उन्हें बता दिया, लेकिन डांट पड़ने के बाद मैंने निर्णय लिया कि अब जब दाखिला ले ही लिया है तो मैं अच्छे से पढ़ूंगा. मैंने पूरी कोशिश करके अंतिम वर्ष में 72 प्रतिशत अंक प्राप्त किये. मैडम डॉ. सुभद्रा चौधरी जी के सुझाव पर मैंने बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी से म्यूजिकोलॉजी में परास्नातक किया, इस तरह से मैंने सामान्य शिक्षा से म्यूजिक के क्षेत्र में प्रवेश किया, पहले प्रयोग में और फिर शास्त्र में.

- आपने शास्त्र की शिक्षा इतने समृद्ध व विद्वतजनों के बीच में प्राप्त की है, उस समय की शिक्षण शैली के बारे में बताएं.

मेरे मामले में शिक्षा दो प्रकार से हुई है, सामान्य विद्यार्थी क्लास में नोट्स बनाकर या किताबें पढ़कर काम चला लेते थे, पर मैं उस तरह से नोट्स नहीं बना सकता था और किताबों के लिए भी हमें किसी दूसरे पर निर्भर रहना पड़ता था. ग्यारहवीं कक्षा से मेरी ऐसी पढ़ाई हुई कि मैंने किताबों को सुन-सुनकर याद किया और उस समय ब्रेल राइटिंग मशीन से हम शॉर्ट नोट्स बना लिया करते थे, इतना पढ़कर परीक्षा पास करने तक का काम हो जाता था, लेकिन हम जब किसी विषय का विस्तार से अध्ययन करते हैं तो दो-चार पुस्तकों से काम नहीं हो पाता है.

बनारस जाने के बाद हमें हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत सभी भाषाओं की पुस्तकें पढ़नी होती थी, जिसके कारण लगातार हमको मित्रों और सहयोगियों पर निर्भर रहना पड़ता था, वो हमें पुस्तकें पढ़-पढ़कर सुनाया करते थे. विभाग में सुबह 11:00 बजे से शाम 6:00 बजे तक सबके साथ अध्ययन व चर्चाएँ होती रहती थी, अतः हमने अधिकतर सुनकर ही समझा और सीखा है.

- आपने 33 वर्षों तक अध्यापन कार्य किया है, तो आपके समय से वर्तमान समय तक में शास्त्र के स्वरूप में क्या परिवर्तन आया हैं तथा उसके प्रति विद्यार्थियों का रुझान में क्या बदलाव आया है ?



भातखण्डे एवं पलुस्कर स्मृति समारोह, अगस्त 2012, इं. क. सं. वि. वि. खैरागढ़, साथ में दिख रहे हैं डॉ. तेजसिंह टाक

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

शास्त्र के प्रति संगीत के विद्यार्थियों का रुझान क्रियात्मक की तुलना में प्रायः कम ही पाया जाता है, आज भी कम है और पहले भी कम ही था, तो इसमें कुछ खास अंतर नहीं आया है. पहले क्रियात्मक क्षेत्र की तरह ही शास्त्र पढ़ने वाले विद्यार्थियों में भी निष्ठा पाई जाती थी, लेकिन वर्तमान में उस निष्ठा व समर्पण का अभाव हमको प्रयोग के विद्यार्थियों में ही देखने को मिल रहा है, उनका उद्देश्य तो किसी प्रकार से डिग्री प्राप्त करना और बस नौकरी लग जाए, इतना ही होता है.

आज प्रयोग में जैसी स्थिति है, लगभग वैसे ही उपेक्षा शास्त्र में भी है, बस इतना अंतर आया है कि शास्त्र में पहले बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय और खैरागढ़ विश्वविद्यालय में नियमित रूप से पाठ्यक्रम चल रहा था, तो वहां पर लगातार अध्ययन-अध्यापन होता रहा. आज के समय में पूरा पाठ्यक्रम ना के बराबर चल रहा है, ऐसी स्थिति में जो विद्यार्थी थोड़ा बहुत उत्सुक रहे भी, उन्हें शास्त्र को लेकर आगे बढ़ने का मौका नहीं मिला, अब केवल प्रयोग के विद्यार्थियों को यदि किसी प्रकार की जिज्ञासा है या वो सीखना चाहते हैं, तो उनको अवश्य सब उपलब्ध कराया जाता है. वर्तमान में औपचारिक रूप से औरंगाबाद में यह कोर्स परास्नातक स्तर पर शुरू किया गया है.

- विद्यार्थी जीवन की कोई दिलचस्प घटना या आपके गुरुओं के साथ कोई ऐसा अनुभव जो आप हमसे साझा करना चाहें.

गुरुओं के मामले में शुरू से ही मैं बहुत सौभाग्यशाली रहा हूँ. गुरु कुछ इस प्रकार के जो केवल पाठ्यक्रम पर ज़ोर नहीं देते थे, उसके अलावा अन्य चीजों को भी अनायास पढ़ने के लिए प्रेरित कर दिया करते थे. मुझे याद है कि जब पहली कक्षा में आंध्र प्रदेश से आए श्री एम. एस. शर्मा सर हमको पढ़ाया करते थे, तो उन्होंने शायद समझ लिया होगा कि पाठ्यक्रम में जितना पढ़ने का है, वह पर्याप्त नहीं है और इसीलिए वह पाठ्यक्रम के साथ-साथ रोज कुछ एक्स्ट्रा पढ़ने और याद करके आने के लिए लिखवा देते थे. पाठ्यक्रम में ना होते हुए भी हमें याद करना होता था. इस तरह उन्होंने हमको गीता का तीसरा, चौथा, सातवां, ग्यारहवां, बारहवां, व पंद्रहवां अध्याय, श्यामला दंडकम् जो कि कालिदास ने देवी की स्तुति के लिए रचा था एवं पूरा वेंकटेश स्तोत्रम् भी रटा दिया था. इसी प्रकार कभी-कभी अंग्रेज़ी की कविताएँ याद करने को दे दिया करते थे, तो ऐसे ही अनायास हमने बचपन से ही बहुत कुछ सीखा. देहरादून में भी कक्षा के बाद अतिरिक्त कई चीजें सिखाई जाती थी, जैसे गार्डनिंग, कुकिंग, निटिंग, बटन लगाना, कपड़े धोना, प्रेस करना, वुड वर्क और तो और प्लंबर वाला काम भी सिखाया गया. बनारस में बहन जी (डॉ. प्रेमलता शर्मा) समय सीमा की चिंता ना करते हुए पाठ्यक्रम के अतिरिक्त भी पढ़ाया करती थी, अगर वह अंतिम वर्ष वाले विद्यार्थियों को पढ़ा रहीं हैं, तो पीएचडी और प्रथम वर्ष का विद्यार्थी भी वहीं बैठेगा, तो प्रकारांतर रूप से भी हमें शिक्षा मिलती रहती थी.

- आपने मतंग कृत बृहद्देशी पर शोध कार्य किया है, तो इस विषय का चयन आपने कैसे किया ?

यह विषय वास्तव में मैंने नहीं चुना था, एम. ए. करके आने वाले विद्यार्थियों की स्थिति जैसी होती है, लगभग हमारी स्थिति भी वैसी ही थी, हम बस पढ़ना चाहते थे, लेकिन विषय का चयन कैसे करना है, क्या करना है, कैसा विषय चुनना है, किस पर काम करना है, वह परखने का सामर्थ्य मेरे अंदर नहीं था, तो बहन जी ने मुझे यह विषय

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

सुझाया था कि “यह बहुत महत्वपूर्ण विषय है और तुम इस पर काम करो”, तो उनके सुझाव पर ही मैंने यह विषय लिया था.

- बृहदेशी के किन पक्षों पर कार्य होना बचा है या किन बिंदुओं पर और ध्यान देने की ज़रूरत है ?



इस ग्रंथ के बारे में सबसे बड़ी समस्या इसका खंडित रूप से उपलब्ध होना है, इसके आखिरी के 2-3 अध्याय तो पूरे-पूरे गायब हैं. दूसरी बात कि इसमें दूसरे ग्रंथों से कुछ अंशों को लेकर बहुत ज्यादा मिश्रण किया गया है, तो समस्या यह है कि जब तक हमें मूल ग्रंथ ना प्राप्त हो जाए, तब तक यह कह पाना बड़ा मुश्किल है कि मतंग मुनि के अपने विचार कैसे थे? हाँ, इतना अवश्य है कि भरत मुनि के बाद की परंपरा में सबसे पहले उपलब्ध ग्रंथों में उन चीजों का संगीत के रूप में प्रतिपादन प्राप्त हो, क्योंकि बृहदेशी के पहले देशी संगीत पर कोई भी ग्रंथ हमें उपलब्ध है ही नहीं. उसकी शास्त्र परंपरा में

(राष्ट्रीय संगोष्ठी में व्याख्यान, रीवा, मार्च 2012) उद्देश्य, लक्षण, परीक्षण जैसे चीजों का निर्वाहन करके, परिभाषाएं भी दी गई हैं और जगह-जगह पर शास्त्रार्थ भी किया गया है, जिसमें बीच-बीच में कुछ अंश अभिनव भारती, दत्तिलम्, संगीत रत्नाकर के हैं, शायद परवर्ती काल में किसी व्यक्ति ने उसमें मिला दिया है. उसमें गीति और वृत्ति वाले पक्ष में थोड़ी सी बातें खंडित हैं, तो मूल धारणा का आंशिक अनुमान करना होगा, नाद, मूर्च्छना, स्वर ठीक है पर देशी राग वाला अध्याय सबसे महत्वपूर्ण होता, यदि वो पूर्ण रूप में उपलब्ध होता. उस काल में कौन से राग थे और उनका किस प्रकार का स्वरूप था? वह हिस्सा आज हमें प्राप्त नहीं हो पाता है, ग्रंथ में कुछ और विशलेषण हो सकता है, विषय पर विचार करके, उसमें शोधन किया जाए कि इसमें से मतंग का क्या है या नहीं है, ऐसे और भी पक्ष शेष हैं जिनपर कार्य किया जा सकता है.

- NIVH, देहरादून द्वारा प्रायोजित प्रोजेक्ट “Development of Braille Notation in Music” पर भी आप काम कर चुके हैं. यह क्या है और इससे विद्यार्थी कैसे लाभान्वित हो सकते हैं?

पूरे हिंदुस्तान में प्रामाणिक रूप से ब्रेल में कोई संगीत लिपि तैयार नहीं की गई थी, जिस कारण से विद्यार्थियों को बड़ी समस्या होती थी. एन.आई.बी.एच., देहरादून ने ऐसी लिपि बनाए जाने की पहल की जो पूरे देश में समान रूप से लागू हो सके. उसी उद्देश्य से मैंने उनके कार्य में भाग लेकर लिपि निर्मित की, जो सफल हो गई है और उसका प्रयोग करके ब्रेल में पुस्तकें आज भी प्रकाशित की जा रही हैं. कोई भी दृष्टि बाधित बच्चा, उस नोटेशन के माध्यम से उन बंदिशों को याद कर सकता है, जैसे की अन्य विद्यार्थी करते हैं.

- इसी के साथ 'Documentation of music making techniques of plucked stringed instruments of North Indian Music in 20th century' विषय पर आपने कार्य किया, कृपया इसके बारे में जानकारी दें।

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

यह प्रोजेक्ट मूल रूप से प्रख्यात सितार वादक पं. संजय बंदोपाध्याय का था और मैं उसमें को-इन्वेस्टिगेटर था। इस परियोजना में वादक सृजन करते समय किन-किन अवस्थाओं से गुजरते हैं यानी मनोविज्ञान से लेकर प्रायोगिक रूप में बजाने की तकनीक तक की पूरी बातें इसमें शामिल हैं, पहले मनोदशा कैसी होती है, मन में कैसा सृजन होता है फिर उसको अभिव्यक्त करने के लिए कौन सा तरीका अपनाया जाता है। कल्पना से की गई रचना किस सीमा तक साम्य है और वैषम्य होने पर क्या होता है, इस प्रोजेक्ट में विस्तार से इसका वर्णन है।

- आज के समय में इलेक्ट्रॉनिक वाद्य यंत्रों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है, तो इसके हानि-लाभ के विषय में आपके विचार जानना चाहूँगी।

लाभ यह हुआ कि हम लोग थोड़ा सा आत्मनिर्भर हो गए हैं, पहले रियाज करने के लिए हमें तंबूरा और ताल के लिए संगतकार की जरूरत पड़ती थी। जैसे जिस समय हम सीख रहे थे, उस समय हमें अलग से एक सहायक की आवश्यकता पड़ती थी। आज की स्थिति में हमें संगत के लिए ठेका और लहरा दोनों ही उपलब्ध हैं, तो अब विद्यार्थी आत्मनिर्भर हो गया है। जैसे रागिनी का प्रयोग तंबूरे की आवाज के लिए करते हैं, तो तानपूरा मिलाने के लिए परेशान नहीं होना पड़ता है, लेकिन इससे विद्यार्थियों की संगीत के मूल रूप पर पकड़ कमजोर हो रही है। पहले यदि तबला या



IGNCA वाराणसी द्वारा आयोजित ठाकुर जयदेव सिंह स्मृति समारोह में निदेशक डॉ. विजयशंकर शुक्ला से स्मृति चिन्ह प्राप्त करते हुए: 2018

तानपूरा बेसुरा होता था, तो हम समझ जाते थे और उसे ट्यून करने का अभ्यास करते थे, नहीं ठीक कर पाते तो गुरु जी या किसी वरिष्ठ विद्यार्थी के पास जाते थे। अब पूरा मशीन से बना बनाया है, तो बेसुरा है कि नहीं और अगर होगा भी तो ट्यून कर नहीं पाएंगे। यह निर्भरता से विद्यार्थियों का नुकसान हो रहा है क्योंकि वो आंख बंद करके पूरा-पूरा उस पर विश्वास कर ले रहे हैं।

आज के विद्यार्थियों के लिए सुविधाजनक हो गया है रिकॉर्डिंग से सीखना। अब रिकॉर्डिंग से एक पक्ष से तो फायदा हुआ है, आज से 50 या 100 साल पहले तक जब रिकॉर्डिंग नहीं होती थी, तो हम गुरु जी को बार-बार सुनते थे, लेकिन अब गुरु जी ने एक बार गा दिया या गा के रिकॉर्डिंग भेज दिया, अब हम उसे सुन-सुनकर कॉपी कर रहे हैं, किन्तु उसकी गायिकी में सुधार तो सीना-बसीना तालीम से ही आता है।

- कोरोना काल में संगीत काफी हद तक ऑनलाइन हो गया। प्रोग्राम, सेमिनार, सीखना - सीखना आदि, आप इसको किस नजरिये से देखते हैं?

कोरोना काल में जो लोग सक्षम या थोड़ा प्रयासरत थे, उन्होंने घर में रहते हुए भी ऑनलाइन सीखना-सिखाना जारी रखा, लेकिन जो आलस्य कर गए वह पिछड़ गए। यह तो सर्वविदित है कि समस्याओं का मुकाबला करके जो व्यक्ति आगे बढ़ जाता है, उसको सफलता मिल जाती है और जो हार मान जाता है, वो प्रभावित होगा ही, यही तो प्रकृति का नियम है।

- नई शिक्षा नीति के विषय में आपके क्या विचार हैं ?

मेरी समझ से यह सैद्धांतिक तौर पर तो ठीक लग रही है, परंतु व्यावहारिक तौर पर उसको किस सीमा तक क्रियान्वित किया जाएगा, इस पर मुझे संदेह है, क्योंकि इतने बड़े पैमाने पर हर किसी को कलाओं की सुविधा उपलब्ध करा पाना संभव नहीं. सरकारें कितना कर पाएंगी, हमारे स्कूल आज भी हर प्रकार से सक्षम नहीं हो पाए हैं, अभी तो टॉयलेट और कमरे की व्यवस्था में ही परेशान हैं. खैर, अच्छी योजना है यदि लागू कर पाए, तो कलाओं का भला होने की संभावनाएं तो अवश्य है.

- शोध के विषय का चयन विद्यार्थी कैसे करें?

यहीं शास्त्र बीच में आ जाता है, क्योंकि विद्यार्थियों का ज्यादा रुझान प्रयोग की ओर रहा है और शास्त्र उतना ही पढ़ा है, जितने में अच्छे अंक आ जाएं, तो ऐसे विद्यार्थियों को पीएचडी का विषय चुनने में दिक्कत होती है. आजकल पीएचडी करने का उद्देश्य बदल गया है, क्योंकि उससे अच्छी नौकरी प्राप्त होने की संभावना बढ़ जाती है. विद्यार्थी चाहता है कि कुछ ऐसा विषय हो, जो आसान हो और जल्दी पूरा हो जाए, बी.ए., एम.ए. की भाँति ही पीएचडी की भी डिग्री चाहते हैं. सुयोग्य विद्यार्थी की शोध सम्बन्धी समझ की शुरुआत परास्नातक स्तर से ही हो जानी चाहिए. यदि शास्त्र का अध्ययन करते समय समीक्षात्मक -



सेवानिवृत्ति के अवसर पर इ. क. सं. विवि. द्वारा विदाई समारोह में प्रदत्त अभिनन्दन पत्र, दिसम्बर 2018

मीमांसात्मक दृष्टि पैदा नहीं होगी, तब तक आप शास्त्र के क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ सकते हैं. पीएचडी की शुरुआत 'समस्या' से होती है, जिसका समाधान हमें खोजना होता है. यह बाद की बात है कि आप समस्या का समाधान खोज पाते हैं या नहीं, पर शुरुआत ही गलत न हो, इसलिए उचित होगा कि पी.जी. करने के बाद में विद्यार्थी 1-2 साल तक ऐसे ही अध्ययन करते रहें.

आज के जीवन में हर चीज के केंद्र में पैसा आ गया है, विद्यार्थियों की सोच जल्दी से जल्दी शिक्षा पूर्ण करके, बड़े पद पर आने और ज्यादा पैसा कमाने की है, तो ऐसी स्थिति में शिक्षा प्राप्त करना हमारा उद्देश्य नहीं रह गया है. स्वान्तः सुखाय के लिए संगीत को अपनाना अलग बात है, कलाएँ मनुष्य के अंदर जो मानवीय संवेदनाएँ हैं, उन्हें पैदा करने का साधन है, धनोपार्जन का नहीं. कलाओं को आगे बढ़ाने के लिए संरक्षण की आवश्यकता रही है और जब तक उस प्रकार का संरक्षण कलाकारों को नहीं मिलेगा, तब तक कलाएं आगे नहीं बढ़ेंगी. हम कला से रोटी और पैसा भले ही कमा लेंगे, लेकिन कला का स्तर तभी आगे बढ़ेगा, जब कलाकार को स्वतंत्र छोड़ दिया जाए, उसको उससे पैसा कमाने के लिए मजबूर ना किया जाए.

- आज के समय में हो रहे फ्यूजन कल्चर के बारे में आप क्या कहना चाहेंगे?

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

मुझे लगता है कि हमारी भारतीय रागदारी परंपरा का जो मूल है, उस मूल को हानि तभी से प्राप्त हो जाती है, जैसे ही हम उसमें टेंपर्ड स्केल का प्रयोग करने लगते हैं, जिसमें सभी स्वरों के अंतराल बराबर होते हैं, इसके प्रयोग से रागदारी भी नष्ट हो जाएगी. रागदारी ही वास्तव में भारतीय संगीत की आत्मा रही है, जो कि प्राचीन काल से आज तक विद्यमान है, आप जैसे ही रागदारी में टेंपर्ड स्केल, खड़े स्वर या हारमनी का उपयोग करेंगे, तो निश्चित रूप से मेलोडी का अपना स्वरूप नष्ट हो जाएगा. अब लोग नयापन लाने के लिए प्रयोग कर रहे हैं, करते रहेंगे और हम उसको रोक भी नहीं सकते हैं, पर मेरे ख्याल से उन्हें रागदारी की आत्मा को प्रभावित करने से बचना होगा.

आज से 50 साल पहले के फिल्मी गानों को सुन लीजिए और अभी पिछले 15-20 वर्षों के अंदर के फिल्मी गानों को सुनिए, जिनमें ऑर्केस्ट्रा बहुत ज्यादा आ गया है, उनकी ट्यून में अब वो मेलोडी नहीं रह पाई है, जो कि पहले के गानों में हुआ करती थी. मदन मोहन जी, रफ़ी जी, बसंत त्रिपाठी जी कहीं ना कहीं अपने संगीत को रागदारी से जोड़कर चलते थे, उनमें गमक या खड़े-खड़े नोट्स नहीं होते थे. रागदारी या भारतीय संगीत की रक्षा करने के लिए हमें मेलोडी प्रधान संगीत रखना चाहिए और उसे टेंपर्ड स्केल से दूर रखना चाहिए क्योंकि इन सब से तत्कालीक तौर पर कुछ नया तो किया जा सकता है या उसे प्रशंसा भी मिलेगी पर उसका जिक्र बहुत लंबा नहीं होगा, आज वह गाना आएगा और दो-तीन महीने में खत्म हो जाएगा.

- धन्यवाद सर, आपका कीमती समय देने के लिए और हमारे साथ अपने विचार साझा करने के लिए .

प्रो. अनिल बिहारी ब्योहार जी के विभिन्न प्रकाशन:**पुस्तकें:**

1. 'मतंग मुनि कृत बृहदेशी' (भाग 1 एवं 2) आई.जी.एन.सी.ए. नई दिल्ली तथा मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली का प्रकाशन 1992, 1994
2. 'संगीत कलाधर' संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली, 2006

पुस्तक समीक्षा:

1. 'हिन्दी संगीत रत्नाकर', संगीत कला विहार, अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मण्डल, मिरज का प्रकाशन, 2001

शोध पत्र एवं लेख:

1. 'ध्रुवपद की दरभंगा परम्परा', ध्रुवपद वार्षिकी, वाराणसी, 1986
2. 'संगीत के क्षेत्र में मध्यप्रदेश का योगदान', संस्कृति संगम, इलाहाबाद 1987
3. 'प्रयोगात्मक कलाएँ: प्रयोक्ता और प्रेक्षक का अन्तर्सम्बन्ध' नादार्चन, वाराणसी, 1992 तथा कलात्रयी, पटना 1994
4. 'बृहदेशी ग्रन्थ के रचयिता मतंगमुनि पर एक तथ्यपरक अवलोकन', नादार्चन, वाराणसी, 1994
5. 'Sharangdev and his Sangeetratnakar' ग्रन्थ में शोधलेख 'शाङ्गदेव पर मतंग और अभिनवगुप्त का प्रभाव' सम्पादक प्रो० प्रेमलता शर्मा, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली, 1998
6. 'संगीत में वर्ण' नादार्चन, वाराणसी, 1998

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

7. 'जाति और ग्राम राग' कलायात्रा, कला परिषद् भोपाल का प्रकाशन, 1999
8. 'संगीतशास्त्र के परवर्ती ग्रन्थों में बृहदेशी के वाद्यनृत्य विषयक उद्धरण-ताल-' सम्पादक प्रो० प्रेमलता शर्मा, 'Matang and his work Brihaddeshi' संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली, 2001
9. 'संगीत में मार्ग और देशी की अवधारणा', कला सौरभ, इ०क०सं०वि०वि० खैरागढ़, 2002
10. 'प्रयोगात्मक कलाओं में देश और काल की अवधारणा' कलावैभव, इ०क०सं०वि०वि० खैरागढ़, 2003
11. 'संगीत के कुछ महत्वपूर्ण हिन्दी ग्रन्थ' कलावैभव, इ०क०सं०वि०वि० खैरागढ़, 2004
12. 'मानव जीवन में कला', सोवैनियर, इ०क०सं०वि०वि० खैरागढ़, 2006
13. 'निबद्ध और अनिबद्ध के माध्यम से राग की अभिव्यक्ति', कलासौरभ, इ०क०सं०वि०वि० खैरागढ़, 2009
14. 'देशी संगीत का प्रथम महत्वपूर्ण ग्रन्थ बृहदेशी -', छायाण्ट, उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादेमी, लखनऊ, अक्टूबर दिसम्बर-2009
15. 'मतंग कृत बृहदेशी का एक परिचय: भारतीय संगीतशास्त्र' प्रेस एवं पब्लिकेशन सेल, बी०एच०यू०, वाराणसी का प्रकाशन 2009
16. 'संगीत में स्वरलिपि: आधुनिक सन्दर्भ में उसकी उपयोगिता' नव सरगम उज्जैन से प्रकाशित 'संगीत मंगला' में 2011
17. 'मतंग के मत से भाषा निरूपण', स्वर भारती, भारतीय विद्याभवन, नई दिल्ली, 2017
18. 'देशी की अवधारणा', स्वर भारती, भारतीय विद्याभवन, नई दिल्ली, 2017
19. 'प्रबंध', स्वर भारती, भारतीय विद्याभवन, नई दिल्ली, 2017
20. 'संगीत में वर्ण' कलावसुधा, लखनऊ, 2020
21. 'बलिहारी गुरु आपणे' कलावसुधा, लखनऊ, 2020
22. 'आधुनिक सन्दर्भ में प्रबन्ध की अवधारणा' संगीत संकाय का प्रकाशन, बी०एच०यू०, 2021
23. 'संगीत शास्त्र का प्रयोग निरपेक्ष विकास' 'शलाका पुरुष ठाकुर जयदेव सिंह', इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली का प्रकाशन 2021



संगीत नाटक अकादेमी नई दिल्ली द्वारा हम्पी, कर्णाटक में मतंग मुनि पर आयोजित अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में सम्मिलित प्रतिभागियों के साथ बायें से डॉ. आदिनाथ उपाध्याय, डॉ. एन. रामनाथन, डॉ. अनिल ब्योहार, डॉ. ऋत्विक् सान्याल, डॉ. सुभद्रा चौधरी, डॉ., इंद्राणी चक्रवर्ती और डॉ. बिमला मुसलगाँवकर



2009 में मद्रास म्यूज़िक अकादेमी में व्याख्यान देते हुए, साथ में दिख रहे हैं डॉ. एन. रामनाथन

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals



आई.जी.एन.सी.ए. वाराणसी परिसर, ठाकुर जयदेव सिंह स्मृति समारोह प्रतिभागियों के साथ, 18/09/2018



महागामी गुरुकुल, औरंगाबाद द्वारा आयोजित संगीत एवं नृत्य समारोह 2011